गर्माती धरती के बाबत चेतावनी

प्रवीण कुमार

पृथ्वी के तापमान में कुछ ही डिग्री का हेरफेर विश्व की जलवायु में बहुत बड़ा बदलाव ला सकता है - इतना बड़ा बदलाव जिसे पिछले 10 हज़ार सालों की अवधि में किसी ने नहीं देखा है। अगर ऐसा हुआ तो हम मानव व अनेक प्रजातियों के लिए इसे झेलना खासा मुश्किल हो जाएगा। उपलब्ध सभी प्रमाण उन कई सारी मानवीय क्रियाओं की ओर इशारा करते हैं जो पृथ्वी के वातावरण में विभिन्न गैसों का उत्सर्जन कर रही हैं। इसके कारण ग्रीन हाउस प्रभाव उत्पन्न होता है तथा पृथ्वी के औसत तापमान में वृद्धि होती है।

ग्रीन हाउस गैसों तथा वायुमण्डल के तापमान में अभूतपूर्व वृद्धि के लिए ज़िम्मेदार ऐसी ही अन्य गैसों के उत्सर्जन में कटौती के लिए वैश्विक सहमति तक पहुंचने की मंशा से नवम्बर 2000 में एक संगोष्ठी आयोजित की गई। लेकिन संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा हेग में आयोजित यह बैठक असफल रही। यह बैठक इस सम्बंध में अप्रैल 1995 में बर्लिन में आयोजित सम्मेलन का दोहराव ही साबित हुई। हमेशा की तरह इस बार भी संयुक्त राज्य अमेरिका ही प्रमुख अभियुक्त के रूप में सामने आया। इस देश में विश्व की आबादी के केवल 5 प्रतिशत लोग रहते हैं किन्तु उत्सर्जित एक चौथाई ग्रीन हाउस गैसों के लिए यही लोग ज़िम्मेदार हैं। हेग में आयोजित बैठक में दरअसल 1997 में क्योटो (जापान) में हुए समझौतों के क्रियान्वयन सम्बंधी निर्णय लिए जाने थे। इस समझौते के तहत विकसित देशों को सन 2012 तक उत्सर्जित गैसों के उनके 1990 के स्तर से 5.2 प्रतिशत की कटौती करना थी।

पृथ्वी की सतह का तापमान-निर्धारण चहुंओर फैली हवा द्वारा तय होता है। लेकिन इस तापमान को हवा के मुख्य घटकों की अपेक्षा कुछ सूक्ष्म घटक ही सबसे अधिक प्रभावित करते हैं। इनमें प्रमुख हैं कार्बन डाई ऑक्साइड, मीथेन व जलवाष्प जैसी ऊष्मा को बांधे रखने वाली गैसें।

कोयला तथा पेट्रोलियम जैसे जीवाश्म ईंधन को जलाकर मानव हर दिन लगभग 2 करोड़ टन कार्बन डाई ऑक्साइड वातावरण में छोड़ता है। एक व्यक्ति हर साल औसतन एक टन कार्बन (या चार टन CO_2) वातावरण में छोड़ता है। एक वर्ष की अवधि में तकरीबन सात गीगाटन ग्रीन हाउस गैसें वातावरण में छोड़ी जाती हैं। (एक गीगा टन = 10 करोड़ टन)। ये गैसें वातावरण में 50 से 2000 वर्षों तक रहती हैं क्योंकि इन्हें सोखने वाले महासागर जैसे प्राकृतिक साधन इन्हें धीरे-धीरे ग्रहण करते हैं। मानव द्वारा निर्मित ग्रीन हाउस प्रभाव का 50 प्रतिशत केवल कार्बन डाई ऑक्साइड द्वारा ही पैदा होता है। ऐसा इसलिए कि कार्बन डाई ऑक्साइड अवरक्त विकिरण को अपने पार नहीं जाने देती। CO_2 सूर्य के प्रकाश को तो आने देती है किन्तु पृथ्वी द्वारा उत्सर्जित अवरक्त विकिरण को रोक लेती है। वैसे यह बात इतनी बुरी भी नहीं है क्योंकि अवरक्त विकिरण के अभाव में पृथ्वी इतनी ठण्डी हो जाएगी कि इस पर जीवित रहना सम्भव न होगा। फिर भी ग्रीनलैण्ड की बर्फ के नमूने तथा वृक्षों पर पाए जाने वाले वलय बताते हैं कि प्राकृतिक रूप से कार्बन डाई ऑक्साइड को सोखने वाले स्रोतों ने औद्योगिक क्रांति से पूर्व के एक हज़ार वर्ष तक वातावरण में कार्बन डाई ऑक्साइड की मात्रा को हवा के प्रति दस लाख कणों में 250 भाग (पीपीएम, parts per million) तक ही सीमित रखा। 1955 तक यह मात्रा 320 पीपीएम हो गई थी और वर्तमान में यह 350 पीपीएम तक पहुंच गई है।

जलवायु परिवर्तन के सम्बंध में गठित अन्तर्शासकीय पैनल (आई.पी.सी.सी.) की 1990 की रिपोर्ट के अनुसार वर्तमान में वातावरण में कार्बन डाई ऑक्साइड की मात्रा में प्रति वर्ष 1.3 प्रतिशत की वृद्धि हो रही है। इस वृद्धि दर से सन् 2015 तक CO_2 की मात्रा 400 पीपीएम तथा सन् 2076 में 600 पीपीएम के स्तर तक पहुंच जाने की सम्भावना है।